



INDIRA GANDHI NATIONAL OPEN UNIVERSITY

Assignment Submission for Term-End Exam June - 2024

ENROLLMENT NUMBER :

2	2	5	4	7	0	3	0	8	2
---	---	---	---	---	---	---	---	---	---

NAME OF THE STUDENT : NIKITA CHAUHAN

STUDENT ADDRESS : Arifnagar, Bokaro Steel City, Chhatisgarh, JP

PROGRAMME TITLE & CODE : MHD ; Master of Arts (Hindi)

COURSE TITLE : Satishya Siddhanta aur Smadachina

COURSE CODE : MHD - 05

REGIONAL CENTRE NAME & CODE : 07 : Delhi 1 (Mohun Estate (South Delhi))

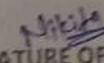
STUDY CENTRE NAME & CODE : 0710 : Deshbandhu College (710)

MOBILE NUMBER :

7	3	0	3	8	2	2	4	1	2
---	---	---	---	---	---	---	---	---	---

E-MAIL ID : nikita.chauhan7838@gmail.com

DATE OF SUBMISSION: 28-04-2024


(SIGNATURE OF THE STUDENT)

THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मैदान गढ़ी, नई दिल्ली - 110068
Indira Gandhi National Open University
Maidan Garhi, New Delhi - 110068



IGNOU - Student Identity Card

Enrolment Number : 2254703082

RC Code : 07: DELHI 1 (MOHAN ESTATE (SOUTH DELHI))

Name of the
Programme : MHD : MASTER OF ARTS (HINDI)

Name : NIKITA CHAUHAN

Father's Name : VEERPAL SINGH CHAUHAN

2254703082

Address : HOUSE NO 186 GALI NO 2 , BUDH VIHAR
AKBARPUR BAHARAMPUR
GHAZIABADGHAZIABAD UTTAR PRADESH

Pin Code : 201009

- Instructions
1. This card should be produced on demand at the Study Center, Examination Center or any other Establishment of IGNOU to use its facilities.
 2. The facilities would be available only relating to the Programme/course for which the student is registered.
 3. This ID Card is generated online. Students are advised to take a color print of this ID Card and get it laminated.
 4. The student details can be cross checked with the QR Code at www.ignou.ac.in



Registrar
Student Registration Division

एम.एच.बी.-05 साहित्य सिद्धांत और सामालोचना
संवैय कार्य
(राष्ट्रीय वडो पर अध्यारित)

राष्ट्रीय पश्चों के उत्तर दीजिए।

प्रश्नक्रम कोड : एम.एच.बी.-05
 संवैय कार्य कोड : एम.एच.बी.-05 शी.एस./2023-24

- | | | |
|----|---|--------|
| 1. | आधुनिक हिन्दी साहित्य में व्यक्त काव्य-लक्षणों का विवेचन कीजिए। | 10 |
| 2. | औषधित्य सिद्धांत पर अपने विचार व्यक्त कीजिए। | 10 |
| 3. | साधारणीकरण पर प्रकाश डालिए। | 10 |
| 4. | प्लेटो और अरस्तू के अनुकरण सिद्धांत का तुलनात्मक वर्णन कीजिए। | 10 |
| 5. | लोजाइनस के उदात्त की अक्षमारणा पर अपने विचार व्यक्त कीजिए। | 10 |
| 6. | टी.एस. एलियट के निवैयवितकता के सिद्धांत की व्याख्या कीजिए। | 10 |
| 7. | मनोविश्लेषणवादी आलोचना की मूल रथापनाओं पर प्रकाश डालिए। | 10 |
| 8. | यथार्थवाद को रपट करते हुए इसकी प्रमुख प्रवृत्तियों का वर्णन कीजिए। | 10 |
| 9. | निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए :
(क) अति यथार्थवाद
(ख) प्रतीकवाद
(ग) विवाद
(घ) रस के अंग | 5X4=20 |

एम्. एन्. डी.- 05

भारित सिद्धांत और समलोचना

(१) आधुनिक हिन्दी साहित्य में लक्षण लाला - लक्षणों का विवेचन कीजिए।

“विस्मी अस्तु अथवा विषय के अस्तावस्तु अथवि विशेषज्ञम् का करना उसका लक्षण लाला है।” लक्षण का प्रमुख प्रयोग होता है समान जातियाँ और लिखन जातियाँ अन्य लक्षणों से विभिन्न करना अथवा व्यष्टित करना अथवा व्यष्टित करना। लक्षण सूतचट्ठ होना चाहिए सार्वत्र स्वारगीर्भ स्वीकृत तथा व्यार्थिक होना चाहिए, जिससे वह अवश्याह हो रखेंगे लाला लक्षण के व्यंदृष्टि में लाल्यकृप विमर्श का प्रयोग लिया जाता है अर्थात् लाला का व्यक्ति ही लाला लक्षण लाला है। अनिंदवर्दन ने लाला लक्षण पर विचार करते हुए ऐसे अव्यार्थी की जात्य गाना है जो अहक्य के हृदय की आहादित पर है। “सह्याहृद्याहृदिशलदर्शमयत्वमेय लाल्यलक्षणम्।”

कात्य

लक्षण को प्रस्तुत करने का प्रयास समृद्धि लाल्यवास्तव से ही प्रारंभ हो जाता है। आचार्य भास्कर एवं भामह से लेनार आचार्य विश्वनाथ और उठनाथ तक लाला का लक्षण प्रस्तुत जाते हैं। ठीक इसी प्रकार वृपभास लाल्यवास्तव में भी लेटी और अस्तु भी। लेनार वृद्धसर्की और लोलिरिज तक लाला लक्षण को प्रस्तुत जाते हैं। लाला लक्षण के व्यंदृष्टि में व्यंदृष्टि में हिन्दी साहित्य के कवियों और समक्षिकारों का मत भी महत्वपूर्ण है। भाक्तिमाल से लेनार आधुनिक जाल तक की कवियों और साहित्यकारों ने लाला लक्षण की अपनी-अपनी मान्यताओं के

अनुसार प्रस्तुत जाने का प्रयत्न किया है।

आधुनिक हिंदी साहित्य में व्याक्ति जाति लक्षण

जाति लक्षण को प्रस्तुत जाने के संरक्षण साहित्य की समृद्धि परंपरा के उपरांत भौतिकालीन और शैतिकालीन हिंदी साहित्य के अविद्यों और आचारों ने इसको विस्तृत प्रयोग अस्त्रप्रसाद किया। आधुनिक हिंदी साहित्य में जाति लक्षण पर परिपक्व व परिष्कृत रूप में प्रस्तृत किया गया। आधुनिक जाल में परिवर्तित हुए परिविश्वासी और प्रश्नियों को परिवर्तित जाते हुए हिंदी के साहित्यकारों और समीक्षकों ने फरंपरा से हुक्मार जाति लक्षण की नवीन अवधारणा को प्रस्तृत किया।

हिंदी कि तदनुसार “अँतःजल की वृत्तियों के चिह्न जा नाम जाकिए हैं” आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने जाति की अल्लेखनीय कृप से परिभ्राष्ट किया है—“भत्तोद्रेक या हृदय की मुकुलावस्था के लिये किया हुआ बाल्द विज्ञान जाति है” शुक्ल जी जाहेर है कि “जाकिए जीवन और जगत की अविभायित है” जीववर जगत्कार प्रसाद के अनुसार “जाति आत्मा की संकल्पनात्मक अनुभूति है जिसका संबंध विश्लेष विकल्प या विज्ञान से नहीं है वह एक प्रेरणायी पैदा स्वरूपनात्मक ज्ञानस्थारा है.. आत्मा की मनन जीकित की अस्याद्धरण अपर्याप्त, जो ऐसे स्थिति को अस्तके मूल चार्किय में सहसा ग्रहण कर लेती है, जाति में संकल्पनात्मक मूल अनुभूति जाही जा सकती है”

प्राचीन जाल की जाति जूही राजसत्ता और विश्वासी जनों से वर्णीय है या तो आधुनि-

यहाँ में यह जनस्याध्वारण से छुड़ा। आधुनिक लाल में लाल में लाल का अवैदना और शिल्प के स्तर पर व्यापक परिवर्तन हुआ। उसकी विषय-पत्रक विस्तृत होती चली गयी। कस्य व्यापक परिवर्तन और विस्तर ने लाल लक्षण को नवीन तरीके से प्रस्तुत किया। लाल लक्षण के संबंध में लाल लुभावराय कहते हैं कि "लाल अंक्षार के प्रति जीव की भाषा प्रश्ना-मानसिक प्रतिक्रियाओं के द्वय का प्रेय के बाली अभियोगित है।" लालावाद के प्रमुख स्तर परिपूर्ण विवर सुनिश्चानन्दन पत्र लाल लक्षण को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि "जीवित हमारे परिपूर्ण दृष्टियों की बाती है।" लघुक्षमार्थ प्रेमचन्द्र के अनुसार "लाल जीवन की आज्ञाचन है।" सुप्रसिद्ध भगवान् डॉ. नरेंद्र लाल लक्षण को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि "रसात्मक शब्दार्थ ही लाल है और उसकी हृदोमयी विशेष विद्या ही आधुनिक अर्द्ध में जीवित है।"

लाल लक्षण की अधिक्यक्ति जैसे हर स्थानसुंदर दस्त लाले हैं कि "लाल वह है जो हृदय में अलौकिक आनंद मा-चमत्कार को सृष्टि करे।" जीव मुक्तिधीय ने कहा - "लाल एक सांस्कृतिक प्रक्रिया है।" युर्जिति निराला ने लाल की परिभाषा दी है कि जीवित विमल हृदय जो उच्छवास है - "उम विमल हृदय उद्घाषत और मैं जा-त्वामिनी जीवित हूँ गणपति चंद्रकृष्ण के अनुसार" लाल, भाषा के उमाध्यम के रचित वह स्वादिय या आणविण युक्त रथना है, किसके अर्थ धीर्घ से स्यामाच व्यक्ति को भी आनंद की अनुभूति होती है। लाल लक्षण के संबंध में एक और जहाँ महादेवी वर्मी कहते हैं कि "जीवित व्यवस्थे पहले शब्द है और अंत में भी यही रहत रह जाती है कि जीवित शब्द है।"

निष्कर्ष क्षप में कह सकते हैं कि संस्कृत साहित्य से आदिका ही जात्य लक्षण जो प्रस्तुत करने की परंपरा की हिंदी साहित्य में और अधिक स्पष्ट और समझ लिया गया। जात्य लक्षण की आधुनिक हिंदी साहित्य के लियों और समीक्षकों ने व्यापक और प्रस्तुत स्पष्ट से विवेचित किया। आधुनिक हिंदी साहित्य के लियों और समीक्षकों ने ग्राहक और प्रस्तुत स्पष्ट से विवेचित किया। आधुनिक हिंदी समीक्षक द्वारा वाजपेयी जात्य लक्षण जो परिस्थिति करने हुए लगते हैं कि “जात्य तो प्रकृत भाषा अनुभूतियों का नेतृत्विक जलना, का नेतृत्विक जलना के भावे द्वया और द्वयमय चित्पत्ति है, जो भाष्य गाप में व्यवापतः भावेश्वर्य और द्वयी उपचरता है।” अतः कह सकते हैं कि आधुनिक हिंदी साहित्य में जात्य लक्षण व्याख्यात प्राचीन वारताओं और माध्यमाओं की परिपक्व ए परिस्थित करने हुए नवीन क्षप से विवेचित करते जा प्रगत्य लिया गया। जात्य जो जीवन में जोङकर हैं वे वाली और जाभी लोड़ाइल की क्यादनावस्था तो जाभी क्यादनावस्था के स्पष्ट में जात्य लक्षण को पूर्णता करने वाली भारतीय साहित्यशास्त्र जी परंपरा में उसके बाद एवं आंतरिक पक्षों का व्याख्य द्वय हुआ है।

② औचित्य सिद्धांत पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

भारतीय ज्ञानशास्त्र के कलिदास में जिन छह प्रमुख संप्रदायों की चर्चा होती है। उनमें औचित्य सिद्धांत का अपना महत्व है। औचित्य की अवधारण क्षमा व भारतीय ज्ञानशास्त्र के विद्वानों के निर्देशन तत्व के क्षेत्र में प्रारंभ से विद्यमान रही है।

ओचित्य ज्ञान की कुरुक्षण के निर्देशन तत्व के क्षेत्र में जाविता में सदा उपरिक्षत रहता है। किसी भी अद्वैत ज्ञाविता में औचित्य तत्व का उल्लंघन नहीं हो सकता। उचित ज्ञानादिक्षण अर्थ स्पृह, प्रस्तुगिल, यथास्थान अथवा उचित ज्ञानादिक्षण की विधि की अवस्था को स्वीकार करता है। उचित होने की स्थिति की अवस्था को स्वीकार करता है। ज्ञानशास्त्री आचार्य केम्ब्र ने औचित्य को औचित्यविचारस्वर्ची में उत्तमा व्यांगोपांग विवेचन किया है। औचित्यविचारस्वर्ची में उत्तमा व्यांगोपांग विवेचन किया है। आचार्य केम्ब्र क्षमा शब्द की स्थान्य व्याख्या करते हुए आचार्य केम्ब्र क्षमा शब्द की स्थान्य व्याख्या करते हुए उचित भाव को औचित्य मानते हैं। वे कहते हैं कि औचित्य उचित भाव को औचित्य भीवितम्। उनके अनुसार जो क्षमिद्वय विधरं ज्ञानस्य भीवितम्। उचित भाव को ही औचित्य कहते हैं। ज्ञानशास्त्री जाहते हुए उचित भाव को ही औचित्य कहते हैं। ज्ञानशास्त्री जो जिसके सदृश हो अर्थात् अनुकूल या उपकूल हो उसे उचित भाव हुआ उचित भाव को ही उचित्य कहते हैं। उचित भाव के बावजूद औचित्य मात्र ही हो सकते हैं। उचित भाव के बावजूद औचित्य मात्र ही हो सकते हैं। इसके बावजूद औचित्य अनुकूल हो सकती है। इसके बावजूद औचित्य अनुकूल हो सकती है।

ओंचित्य सिद्धांत

आष्टुनिक युग के लाय शारिषयों ने भले ही आचार्य द्वैमेंद्र के ओंचित्य सिद्धांत को महत्व न दिया है परंतु इस सिद्धांत का भारतीय समीक्षाशास्त्र में अपना प्रिष्ठेष्म महत्व रहा है। धार्चीन काल में यह सिद्धांत लगभग स्पृष्टमान्य लाय सिद्धांत के क्षेत्र में स्वीकृत और समावृत रहा था। ओंचित्य के पुवारा व्यापक और विशद् वृक्ष जो स्वीकृत कर सभी आचार्यों ने उन्नत से इस सिद्धांत को तथ महत्व प्रशंसन दिया था। ओंचित्य जो जो स्वकरण द्वारा आप्र प्राप्त होता है जिसे हम आचार्य अभिनवगुप्त तथा आचार्य द्वैमेंद्र द्वारा प्रतिपादित मानते हैं। वास्तव में यह भारतीय चिंतन के सम्मिलित प्रयास जो ही कल है। द्वैमेंद्र के अनुसार “ओंचित्य अर्क्ष एवं लायव्यापी तत्व है। ओंचित्य अर्क्ष के दुन्हौ नहीं हो सकते। उसकी किथाहि समित्यात् है व्यष्टिगत नहीं।”

सिद्धांत के क्षेत्र में सभी आचार्यों ने ओंचित्य तत्व की लाय में निरंतर उपस्थिति अनिवार्य मानी जाती है। ओंचित्य का भाष प्रतिष्ठा का भी सबसे पहले आता है और वे प्रभुक भी हैं। ओंचित्य सिद्धांत का आरंभ या परिवर्तन जो क्षेय आचार्य आनंदपर्ण जो ही जाता है। वक्तीकृत स्पृष्टाय के प्रतिरक्षापक आचार्य जुंतंक ने अपने प्रतिपाद्य वक्ता जो हो ओंचित्य का ही द्वसरा नाम माना है। इस प्रकार हम देखते हैं कि द्वैमेंद्र के पहले के आचार्यों ने ओंचित्य सिद्धांत को महत्वपूर्ण माना।

आचार्य द्वैमेंद्र जो अपने पहले के आचार्यों से ओंचित्य सिद्धांत की समृद्ध भावभूमि मिली

इसी शी पूर्वाचार्यी द्वारा दिए गए औचित्य क्षिण्ठां को सूतों
में लगाये जाने आवाये क्षेमेन्द्र ने उसे संप्रदाय का व्यवस्था
का प्रदान किया। आचार्यी क्षेमेन्द्र ने उसे संप्रदाय का
व्यवस्था का प्रदान किया। आचार्यी क्षेमेन्द्र के अनुसार
औचित्य तत्व का लक्षण निम्नका है-

“ उचित प्राहुराचार्यः सदृशं किल यस्त यत् ।
अचित्स्य च यो भावः तदौचित्यं प्रचक्षते ॥ ”

अर्थात् जो जिसके अनुकूल होता है उसे उचित कहा जाता
है। उचित का भाव औचित्य है। आचार्यी क्षेमेन्द्र के अनुसार
सभ लाभ का अपयक्ष है किंतु धूष तज वह भी औचित्य
से कांचर नहीं होता तब तज सहज्यों के लिए को आणीष्टि
हीं जार सलाहा।

आचित्य क्षिण्ठां को उहत के विद्वानों और
आचार्यी ने उपर्युक्त लाभ संप्रदाय मानने की व्याप्ति विभिन्न
लाभ तत्वों में सम-वय स्थापित करने वाला क्षिण्ठां माना
इसलिए कसे सम-वयकारी क्षिण्ठां और इसके प्रवर्तिका आचार्यी
क्षेमेन्द्र को सम-वयकारी आचार्य भी कह गया। औचित्य
क्षिण्ठां में आचार्यी क्षेमेन्द्र ने किसी एक तत्व को महत्व न
देकर सभी तत्वों के संतुलन, सामंजस्य व संगति पर धूष
देकर लाभ वित्तन की व्यापक संदर्भ प्रदान किया है। उन्होंने
औचित्य को जीवन मूल्यों के निकट ला दिया है। औचित्य
को द्वारा जीवन सुंदर और सामंजस्यपूर्ण बनाता है। जो
को सामाजिक मार्गिका, जीवन मूल्यों के संदर्भ में देखने जी
दृष्टि औचित्य द्वारा ही प्राप्त होती है। लाभशास्त्र की
आरम्भिक आचार्यों ने अपने-अपने देश से स्व, अपनी ओर
आदि के उचित प्रयोग का विवेचन करते हुए औचित्य का

जा सकते किया था। औचित्य के बिना न हो तो लोहि समाज ही आधिक लगती है और न गुण ही। औचित्य जात्य जा अंतर्गत है। कस्तूर बिना अन्य लोहि विशेषता या गुण महत्वहीन हो जाता है।

सारांश वरपर में लाइ स्पष्ट है कि लविता में सौदर्यवाचक तत्वों के निर्देशक तत्व के क्रप में औचित्य की सत्ता स्वीकार की कि जाती रही है। “जो पश्च निष्प्रयात्मक क्रप से जिसके अनुक्रप होती है, उसके उचित जाहते हैं और उचित के भाव की औचित्य जाहते हैं।”

वस्तुतः जातीय तत्वों का समुचित प्रयोग ही औचित्य है। इसलिए यह जात्य के स्वक्रप की तरह लोहिता में अनिवार्य है। औचित्य तत्व के प्रपत्ति जा न्द्रीय आचार्य द्वैमैद्र को किया जाता है, किंतु वस्तुतः यह इसके प्रपत्ति न होकर व्यवस्थापन है। कृष्णसे पूर्व आचार्य मरत, भास्तु, दंडी, उद्घाट, कपट, आनन्दवर्धन, छुर्तंज और महिमभृत के गंधों में कस तत्व के संबंध में प्रत्यक्ष व परोक्ष व क्रप से पर्याप्त सामग्री मिल जाती है। अस्वार्य द्वैमैद्र ने उस समय तक प्रचलित संपूर्ण जात्य सिद्धांतों में समन्वय रथापित जात्य जा एक पूरी स्वक्रप प्रवक्तुत जरने में अभूतपूर्व सफलता हासिल की। औचित्य सिद्धांत की जात्यना स्व सिद्धांत का विकास इस सिद्धांत में से ही हुआ है अतः एक प्रकार से वह स्व जा उंगा ही है। स्व की परिधि में ही औचित्य की सत्ता और सार्थकता है।

③ साधारिकरण पर प्रकाश डिल्ट

स्याधारणीकरण अर्थ है स्यामा-योगिकरण। स्याधारणीकरण को प्रक्रिया में विज्ञावादि का विशेष व्यमात्र दीज्ञ जाता है वहाँ वे समान प्रतीत होने लगते हैं। अर्थात् ज्ञात्य में गतिशीलता के स्थान दर्शक की अनुभूति का तदात्मा हो जाता है।

“अस्याधारणास्य स्याधारणीकरणम् कर्ति स्याधारणीकरणम् ।” अर्थात् अस्याधारणा या प्रक्रिया को स्याधारणा या व्यवस्थामान्य उनाने की प्रक्रिया का नाम ही अस्याधारणीकरण है।

स्याधारणीकरण के कारण शब्दुत्तमा आदि विशेष पाप स्यामान्य पाप के रूप में प्रतीत होते हैं। अर्थात् शब्दुत्तमा, शब्दुत्तमा न रहकर आग्नी माप रह जाती है। शब्दों का व्यक्ति विशेष से आधृद्वा न रहकर मुक्त हो जाना अस्याधारणीकरण कहलाता है। इस प्रकार “स्याधारणीकरण” एवं व्यामा-योगिकरण अनुभूत है जिसमें वस्तुतः व्यापार तथा ज्ञात जीवित होकर विविधिकरण रूप में दिखाई देती है अनुभूत होने लगती है। युप्रस्तु आचार्य गड्हनायक ने अनुसार

“भावकात्मं स्याधारणां, तेन हि व्यापारेण विभादायः स्थायी-च स्याधारणी कियते ।”

अर्थात् भावकात्म की एक विशिष्ट अर्थ में स्याधारणीकरण है। इस व्यापार से विज्ञावादि और स्थायी जीवों का स्याधारणीकरण होता है।

स्याधारणीकरण का अर्थ चारिता और उपर्याङ्मयता है। लीच ज्ञाता का तदात्मा ही आचार्य गड्हनायक उक्तका है।

के अनुसार

साधारणीकरण का अभिप्राय यह है कि पाठ्यक्रम के प्रोत्ता के मन में जो व्यक्तिगत विशेष या व्यक्त विशेष असी हैं उन ऐसे काण्डा में वर्णित आशय के भाव का आज्ञान होती है।

जोकि प्रस्तुत विश्व के लाभ लाना और देश के विकास का साधारणीकरण होना है वहकि इसका उद्देश्य देश के अनुसार लाहौदग के नित का साधारणीकरण होना है।

जो कोई ने समझी तो वो विशेष महत्व नहीं है। साधारणीकरण के लिए उपर्युक्त विशेष लोगों के साधारणीकरण उपर्युक्त विशेष लोगों के साधारणीकरण है। “साधारणीकरण अवार भासा का उपर्युक्त लोगों के प्रयोग है। गह पर्योजना लोगों का गह लोगों के लिए उपर्युक्त है और पर्योजना के लोगों की गह लोगों के लिए उपर्युक्त है और पर्योजना के लोगों को लोगों के लिए उपर्युक्त है और अवार है। गह पर्योजना का उपर्युक्त है और अवार है।” आवार एवं दूसरे लाजपती के अनुसार

“साधारणीकरण में लोगों की विविधता का अस्ति त्यापरी का साधारणीकरण होता है।”

विनी के अनुसारों ने साधारणीकरण के बोलबों में इस उस लाभ दिया है-

1. साधारणीकरण आज्ञान व्यक्ति का होता है।
2. साधारणीकरण लाहौदग पाठ्यक्रम या विद्या के लिए लाभदायक है।
3. साधारणीकरण व्यक्ति की उपर्युक्ति का होता है।

साधारणीकरण की उपीति के बारा

आनंदी और मरीषी के द्वारा साहित्य क्षेत्र के नए नए अंग साधारणीकरण की उपीति को विस्तृत रूप से जाना जाता है।

(ii) पूर्वजान

इस साधारणीकरण की पुश्टि आवश्यक है। किसी साहित्य का ज्ञान अहम्यता के लिए ज्ञान विशेषज्ञों के ग्राहण से ज्ञान ज्ञान की अनुभूतियों को समझने का प्रयास करते हैं।

(iii) वैदिकसामाजिक

इस अवधि में व्यष्टियां ज्ञान का पूर्ण रागानुसार क्षमा में देखता हुआ वैदिक ज्ञान का कुछ दृष्टि से परे होकर लौकिक हृष्टि में लीन हो जाता है। इसे आवार्यी कुल ने क्षणिक के व्यक्तिगत दृष्टि से मुख्य होकर लौकिक सामाजिक ज्ञानभूमि पर प्रतिष्ठित होना माना है।

(iv) अनुभूति

साधारणीकरण की इस अवधि में स्वस्थ ज्ञान को देखते या पढ़ते समय उसमें आए पाई जी अनुभूति होती है।

(v) तुलना

इस अवधि में स्वस्थ ज्ञान अपने मन में आप हुए विशेष उपाधियों से युक्त पाई जी तुलना अपनी अवधि के बारा पूर्ण अधिति अनुभूतियों तथा

वृषा विकारों के लकड़ा है।

(v) स्यामा-रीविरण

ज्ञानी लहर का पासी से अमुख्यतियों, आदर्शों एवं व्यक्तिगतों
की अनुसूची वाली उपलिख्यमुक्ति कृप्या से निर्दिष्ट जारी
है। इससे वह स्यामा-रीविरण की आवश्यक जो प्राप्त होता

C है।

④ प्लैटी और अस्ट्रो के अनुकरण सिद्धांत का तुलनात्मक वर्णन कीजिए।

प्राचीन व्याहित्यशास्त्र में अनुकरण एवं महत्वपूर्ण अनुकरण है। वास्तविक भगवान् और विनार जगत् के बीच व्यंति की विव्याख्या के लिए अनुकरण सिद्धांत को प्रतिष्ठित किया गया।

प्लैटी का अनुकरण सिद्धांत

अतिप्रथम महान् दार्शनिक प्लैटी द्वारा अनुकरण सिद्धांत को प्रतिष्ठात्वित किया गया। प्लैटी के अनुभ्यव विचार ही प्रमाणतय है यह व्याख्यार विचार का अनुकरण है। प्लैटी की व्याख्या अनुकरण से नहीं अनुकरण के विषय से है। प्लैटी कहते हैं कि जाति भिक्षुकों अनुकरण का विषय है, वह उसकी प्रकृति से अनुकरण होता है। कस्तिकी का अनुकरण अजानबन है। लालबार अनुकरण का अनुकरण जाता है कस्तिकी उसकी लालाकृति सत्य से तीन शुद्धी द्वारी पर है।

अस्ट्रो के अनुकरण सिद्धांत

अस्ट्रो के आगमन के काव्यशास्त्रों की दुनिया में एक नवीन चरण का जूलपात्र हुआ। प्लैटी के उपरांत उनके शिष्य अस्ट्रो ने अनुकरण को नया अर्थ प्रदान करते हुए जाला का वृप्तंश अवितरण स्थापित किया, जाला का व्यविदन एवं विद्यानी शक्ति के व्यौपत्ति माना जाया जाना गत बोधवर्य को शिवत्व से अद्यक्ष महत्व प्रदान किया। अनुकरण जाला जगत् की वृत्ति का व्यवहार विवेचन एवं नहीं है बल्कि रात्रि की

प्रस्तुतिकारण के रूप में उपर्युक्त है।

लेटी और अस्तु के अनुकरण स्थिरांत की तुलना

सर्वप्रथम लेटी ने प्रश्नाति का अनुकरण करते हुए उसके अपरात अस्तु ने क्षमतापूर्वी का अनुकरण करते हुए अनुकरण किए हुए लेटी और अस्तु द्वारा प्रतिपादित अनुकरण स्थिरांत में जुट्ठ समानता और उसके क्रियान्वयन परिचालित होता है।

(1) लेटी काल्य की कस वस्त्र में स्वीकारते हुए कि वह जीवन के शुभ वा अनुकरण वारे आदर्शी वाज्य की कथापन में समर्हण करे। परंतु अस्तु ने काल्य की सौंदर्यवादी हृषि से देखते हुए जाहा-

“वासा प्रश्नाति की अनुकूलति है (Art is the imitation of nature)

प्रश्नाति से उन्होंना अधिकार्य जगत् के वास्तवीय वीर्य वृक्ष के व्याय-व्याय उसके आंतरिक क्रप आदि से भी है। लेटी के अनुसार अनुकरण हृ-षि-हृ नाम है, जिसे वे कथार्थी वस्तुपरक प्रत्योगन कहते हैं। जबकि अस्तु अनुकरण को कृष्णनामक किया मानते हैं उन्होंने अनुसार अनुकरण की प्रक्रिया में कला द्वारा प्रश्नाति के अनीज दोष व अपर्णीताएँ प्रवरी जी जाती हैं।

3. लेटी ने अनुकरण को काल्य के आदर्शी रूप के रूप में प्रस्तुत किया लेकिन अस्तु अनुकरण को काल्य वा स्वाधन ही नहीं काल्य के आदर्श वा नियोजन भी मानते हैं।

4. लेटी ने आदर्शवादी हृषि से अनुकरण स्थिरांत की चर्चा

जी जबकि ज्ञानविद्यासंलीय हृषि के अस्तु वे अनुज्ञान विद्यांत का विवेचन किया है।

5. अनुज्ञान के संदर्भ में प्लैटो का हृषिकोण आदर्शवादी है तथा यह कुम्रता पर आधारित है। जबकि अस्तु जा हृषिकोण वैज्ञानिक तथा धार्ष जगत् की ठोस वास्तविकता पर आधारित है। अस्तु जे अनुसार अनुज्ञान मानव सभाव की मूल प्रवृत्ति है जिसका का उत्सुकी मानव की सहज प्रवृत्तियों में होता है और क्षमालिए जाता है। और अनुज्ञान जो की सहज संवर्द्ध है।

6. प्लैटो अनुज्ञान की बात करते हुए उसके रचनात्मक पक्ष की उपेक्षा करते हैं। उनके लिए अनुज्ञान एक गोप्तिक प्रक्रिया है, जो जड़ है तथा रचनात्मक अधार क्षर्जनात्मकता के अलग है। किंतु अस्तु जे अनुसार कियाक्षील मानव ही ज्ञात्य अर्थात् अनुज्ञान का विषय होता है। जीवन जो यह धार्ष पक्ष जगत् में प्रत्यक्ष नहीं होता अतः क्षमके अनुज्ञान में अनुज्ञानी की अनुभूति और ज्ञान-ना का स्पृहा लेना ही पड़ता है। प्लैटो जहाँ अनुज्ञान को पूरी तरह प्रतिष्ठाति की जैसा मानते थे, अस्तु जे अनुसार यह फूनः सूखन का एक प्रबार है।

7. प्लैटो के अनुसार अनुज्ञान समस्त ज्ञानों की मौत्तिक विशेषता है। क्षम हृषि से प्लैटो 'प्रत्यक्ष' ज्ञान की सत्य मानते हुए क्षमली व्याख्या करते हैं; जबकि अस्तु वस्तु जगत् के यथार्थ जो सत्य मानते हुए क्षम व्याख्यायित करते हैं। उनके अनुसार -

“विभक्तार अशापा लिखी की अन्य ज्ञानार ली ही

ही तरह जोधि अनुकारण है।⁹⁹ 9. अनुकारण के संबंध में प्लैटो की दृष्टि आदर्शपरक धी जलिनि अरस्तु की वर्णायित है। प्लैटो 'प्रत्यय', जोन जो सत्य मानते हुए क्षमता व्याख्या बताते हैं; जलिनि अरस्तु कस्तु जगत् की वर्णायि को सत्य मानते हुए कस्ते व्याख्यायित जाते हैं।

10. प्लैटो ने अनुकारण का संबंध कस्तु से जोड़ा; जलिनि अरस्तु अनुकारण को ज्ञानी व्यापार के जोड़ते हैं।

भास्तव्य क्षण में जह जानते हैं कि प्लैटो और अरस्तु द्वारा प्रचुरात् अनुकारण सिद्धांत जा जात्यशास्त्र में एक विशेष महत्व रहा है। मठान दार्शनिक प्लैटो और अरस्तु दो भिन्न-भिन्न व्याचारों का प्रतिनिधित्व जारी हैं। एक और जहाँ प्लैटो आदर्शिकावी और जात्यनावादी विचारधारा से प्रभावित होकर अनुकारण सिद्धांत को प्रतिपादित जाते हैं। प्लैटो ने अनुकारण को वास्तविक जगत् पर जला जगत् के दीर्घ संबंध के लिए निष्पित है, उनजा यह अनुकारण सिद्धांत नैतिकता से संबंधित है। अरस्तु अनुकारण को ज्ञात्य जा अनिवार्य तत्प मानते हैं किंतु यह मशीनी अनुकारण नहीं है। कस्मै दृश्य और विचार तत्प, अनुभूति और जाल्पना के गोग से विशिष्ट सूखनशीलता का समाक्षिण प्रस्तुत किया गया है।

5. लोंगानस के उदात्त की अवधारणा पर आने विचार व्यक्त कीजिए।

सुप्रसिद्ध युनानी दार्शनिक लोंगानस का जात्य बास्तविया स्थिरांत पाश्चात्य कात्य परंपरा में एक विशेष व्याख्याता है। 'परिकल्पना' में लोंगानस व्याहित्य के स्थान रखता है। लोंगानस के मूल प्रश्नों पर विचार करता है और उसके सिद्धांतों का व्युत्कृष्टीयता और व्याख्यातित उल्लेख करता है। लोंगानस का जात्य सिद्धांत अपने पूर्ववर्ती दार्शनिकों के लिये और अस्तु देनों का प्रभाव व्युत्कृष्ट रूप से लीक्षित होता है। एक और लेटो से प्रभावित होने के कारण वे जात्य स्वतन्त्र विद्यान की महत्व का हैं।

लोंगानस का मत है कि उच्चतमा व्याहित्य के अनुभुवों में महान है; यह पह गुण है जो व्यादी-मौदी छातियों के बावजूद स्वाहित्य को सहवे अर्थों में प्रभावपूर्ण करता है। अन्त को परिकारित करते हुए लोंगानस कहते हैं -

"अभियक्षित की विशिष्टता और उत्कृष्टी की ओरत्य है। (Sublimity is always an eminence and excellence in language)" था उदात्त अभियोगना का अनिवार्य प्रबन्ध और विशिष्टता है।"

उपर्युक्त निम्नलिखित गुण हीना चाहिए ये उदात्त भाषा, ऐष्ट भाषा, शैली, ऐष्ट उद्देश्य और गरिमामय स्वतन्त्र विद्यान हीना चाहिए।

उपानृत के व्यष्टिया में लोजाइनस कहते हैं कि उपनृत यहाँ-जहाँ नहीं उल्लिख सदैर्पण व्यक्ति को और संपूर्णतः स्थानीय लाभता है। उपानृत व्यष्टि ही नहीं, उत्पाद्य भी है। प्रतिष्ठा के अतिरिक्त जाम की उत्पत्ति, उत्पादित हैं यह ये भी संभव है। लोजाइनस उपानृत के तर्वों में विचार की महत्वता को सबसे प्रमुख महान देते हैं। विचार की महत्वता तक तक संभव नहीं है, जब तक कहता या लेखन की आत्मा जी महान न हो। वे कहते हैं-

“अँदाय महान आत्मा जी प्रतिदृष्टि है।”

लोजाइनस ने उपानृत तरपे ले विवेचन में पाँच तर्वों जो आवश्यक ठहराया है -

1. विचार की महत्वता
2. आप जी तीक्ष्णा
3. अल्पिकार जा समुचित प्रयोग
4. उत्कृष्ट भाषा
5. स्वना जी गरिमा

लोजाइनस ने उपानृत को विरोधी तर्वों की व्यक्ति की उपानृत के तर्वों के साथ ही जी हैं वे कहते हैं कि बालिकाशास्त्र, भावाडम्बर, बोल्काडम्बर, आदि उपानृत विरोधी हैं। लोजाइनस जा उपानृत से संघर्षित मत है कि “मैं यह धारा पूरे विश्वास की स्थाय जाता हूँ जो आवेग उमत उत्साह के उपास वेग से फूट पड़ता है और एक प्राणी के वक्ता को

जहाँको पिक्सीप से पूर्ण लार देता है उसके बायास्थान
व्यक्त दोनों से स्वर में जैसा उपात आता है वह
अ-यात दुर्लभ है।”

सिंक्रीप में जाह भजते हैं कि
जीआइन्स ने जात्य लो स्पेष्ट बनाने वाले तत्वों पर
प्रिचार लाते हुए उपात किए हैं जो प्रतिपादन किया।
जीआइन्स जो उपात संबंधी अवधारणा धड़त गहन
और व्यापक है। उनकी उपातता जो परिव्य में मुख्य
जो क्षमतावान और प्रवृत्तिगत वरीयता, प्रबल
आपानुभूति, महान विचार, अस्याधारणा बल्पना,
गरिमापूर्ण शांति, उपाम आवेग और विलक्षण मान
जो व्यापार होता है। जीआइन्स जो उपात अवधारणा
जो महत्व क्षमी क्षे प्रतिपादित होता है कि आगे
चलाक इंडियन, एडिसन, वॉस्पर्थ जैसे महान जीवि
और आलोचक उनके कस जात्य कास्त्रिय सिद्धांत
क्षे प्रभावित हुए।

जीआइन्स जो उपात जात्य लो स्पेष्ट बनाने वाला
तथा कृषि लो प्रतिष्ठा दिलाने वाले अनिवार्य और
महत्वपूर्ण तत्व है।

६. श्री० एस० एलियर जी निर्विकार की
ध्याया अधिकार।

निर्विकार की ध्याया विशेषज्ञातादिर्हि के लाला वि
शेषज्ञातादिर्हि के लाला है। श्री० एस० एलियर इस पाठ्यका
र्त्ते निर्विकार ध्याया है। इस पाठ्यकार्त्ते विशेषज्ञातादि
र्हि की जाति श्री० एस० एलियर की ध्याया है निर्विकार की विशेषज्ञातादि
र्हि जोड़ देता है। इसका लाला विशेषज्ञातादि लोक है।
इस्युर अविकार की ध्याया है जोड़ी के लिए विशेषज्ञातादि
की आवश्यक गांधे हैं। जो निर्विकार की निर्विकार है
ध्यायिय के उत्तम लिखा है ऐसा है विशेषज्ञातादि
योग विविकार जाते हैं जोड़े विशेषज्ञातादि तरह
विशेषज्ञातादि विशेषज्ञातादि इस पाठ्यकार्त्ते विशेषज्ञातादि
एलियर ने विशेषज्ञातादि जो गहरा दिग्गज विशेषज्ञातादि
निर्विकार विशेषज्ञातादि है।

श्री० एस० एलियर जा निर्विकार का लिखा है

निर्विकार का पतिष्ठान एलियर जे ध्यायिय
में वहाँ इसी भावि विशेषज्ञातादिर्हि के विशेषज्ञातादि में लिखा
दूसरे अनुग्रह ध्यायिय त अन्य लालों विशेषज्ञातादि
विशेषज्ञातादि की दृष्टि देते हैं, तरामे एकत उपर इस विशेषज्ञातादि
व्याधिभौमिक दृष्टि है। श्री० एस० एलियर एलियर
निर्विकार का सभी विशेषज्ञातादि जोड़े हुए लालों
हैं कि - "जापि जे विशेषज्ञातादि जावों की विशेषज्ञातादि जा
व्याधि-विशेषज्ञातादि।" उक्ती भावना है कि इस विशेषज्ञातादि
का व्यक्तिगत महत्वपूर्ण दृष्टि है उक्ती जावों की विशेषज्ञातादि की

समाज महत्वपूर्ण है।

एकियट ने ही पश्चार निर्विभिन्नता की है - प्राकृतिक और विशिष्ट प्राकृतिक निर्विभिन्नता प्रमुख विषयी या जाग्रात की कामदृष्टि होती है, जबकि विशिष्ट निर्विभिन्नता पौँढ़ जाग्रातों के द्वारा अपलब्ध की जाती है। एकियट कि यह निर्विभिन्नता है कि जल में अभियन्ता जाग निर्विभिन्नता होते हैं और कि उपर्योगी पश्चात के प्रति समर्पित किए जिन निर्विभिन्नताओं आवश्यक हैं क्यों ही वह आजीवन में आसानी और विश्लेषण प्रक्रिया के लिए आवश्यक है। जलव्यक्ति पर विचार जारी समय आजीवन को हर तरह के कुराग्रह और आभ्यास से मुक्त निर्मल मानस जा सकता है।

कविता के धर्म, विचार, अनुभूति, अनुभव, विषय, प्रतीक आदि व्यष्टि के निष्ठी या वैयक्तिक होते हैं। जाग्रात जब अपनी तीव्र अपेक्षा और व्रहण शक्ति के माहृत्तम को अपने अनुभवों को जात्यक्षर में प्रकट करता है। तो वे व्यक्तिगत होते हुए भी व्यष्टि के अर्थात् सामाजिक जन जाते हैं। किंतु उनके भार के मुक्त हो जाते हैं या जाहिर कि वे व्यष्टि की वैयक्तिकता से बहुत दूर बाहे जाते हैं।

कृत्यानि मध्य यही है।
कि कवि जात्यक्षर में अपने वैक्तिक्य भावों में

एवं अनुभूतियों की अभिव्यक्तियाँ आरता हैं। किंतु एलियट ने इन दोनों बाधाओं का ही बहुत विश्वास है। एलियट के अनुभार ना हो जावे जो व्यक्तिगत सहती है और जो ना ही जावे के आरों को भी ही। एवं एलियट दुबारा प्रस्तावित निर्वाचित का स्थिरांत बोल्डार की अभिव्यक्ति अथवा बोल्डार के आत्मप्रबोधन के स्थान पर व्यक्ति वे के अनुशासन व्यवस्थे से अपशासन लारती हैं। एलियट अपने स्थिरांत को एक विज्ञान दुबारा क्षमित्य रूपांतर बदलते हुए लाहते हैं। जब आँखें जो और समझ इक्कि आँखसास्तु और भर में प्लैटीनियम का टुकड़ा शल भाग है। तो प्लैटीनियम की नौजुंगी उपयुक्त दोनों के क्षमित्य से संलफ्यूरिक एसिड का निर्माण होता है। किंतु प्लैटीनियम का टुकड़ा, अपरिवर्तित, तट्टुय और पिण्डित्य रहता है। तीक इसी प्रबोध क्षमित्य वे प्रक्रिया के दोरान जावे मानस भी प्लैटिनम के टुकड़े की आंहि ही निर्विकर रहता है अर्थात् उसके संपर्क से विभिन्न अनुभूतियों संवेदनाएँ और आवन्त रूप में बढ़ती हैं। किंतु वह रूप इसके अप्रभावित रहता है।

एलियट पूरे विश्वास से लाहते हैं जि जावे के व्यक्तिगत के अभिव्यक्ति को प्रस्तुति की विरद्धि है। जावे को व्यक्तिगत

एवं अनुभूतियों की अभिव्यक्तिहीना भारत है। किंतु इलियट ने इन दोनों जगतों का ही बहुत लिया है। इलियट के अनुभार ना हो जावे के व्यक्तित्व का रहता है और जो ना ही जावे के जारों को भी ही। १८४० इलियट दुबारा प्रस्तावित निर्वाचित का सिद्धांत बोलाकार की अभिव्यक्ति अथवा बोलाकार के आत्मप्रबोधन के स्थान पर व्यक्ति वे के अनुरागम १८५५ वर्षे अवशासन भारती है। इलियट अपने सिद्धांत को एक विज्ञान दुबारा व्याख्या स्पष्ट बोर्डे हुए बोर्डे हैं। जब ऑफिसर्जों और अफसर डिंडी ऑफसर्स भरे जार में प्लैटीनियम लोडकड़ा शल जाता है। तो प्लैटीनियम की मौजूदगी उपयुक्त दर्ता के बहुत से सालफ्यूरिक ऐसिय लोड निर्माण होता है। किंतु प्लैटीनियम लोडकड़ा, अपरिवर्तित, तटस्थ और पिण्डित्य रहता है। ठीक इसी प्रभार व्याजन प्रक्रिया के दोरान जावे मानस भी प्लैटीनियम के दूजे जी भाँति ही निर्मित रहता है अर्थात् उसके अपर्ण से विभिन्न अनुभूतियों संवेदनाएँ और भाव नह रख में बदल जाती है किंतु वह सर्व उन्हें अप्रभावित रहता है।

इलियट पूरे विश्वस्त
से जाहो है कि जावे के व्यक्तित्व के अभिव्यक्ति
जो प्रस्त वी विरचित है। जावे की व्यक्तित्व

कारनी ही नहीं है, वह तो माध्यम साथ है -
 केवल माध्यम। उनके अनुसार जविता का
 भाव निर्वयजितक होता है और जवि कस निर्वयजितक
 तो जब तक नहीं पा सकता जब तक कि वह कृति
 के प्रति पूर्णतः समर्पित न हो। एलियट बोहते हैं
 कि स्वना के लिए जवि का होना आवश्यक है;
 परं ऐसा मे जवि नहीं। उनकी मान्यता है
 कि जब इम जविता पर विचार करते हैं तब
 उसे प्रमुखतः जविता के क्षय मे देखना चाहिए
 किसी और क्षय मे नहीं।

कूलोन्मान शीभित्यजित की वस्तुगत - स्वता की
 प्रतिष्ठा एलियट के निर्वयजितका कर्त्तव्यित
 किन्हाँत से पूर्णतः मैल आती है।

(7) मनोविज्ञानवादी आलोचना की गुरुत व्याख्याओं पर प्रभाव

इलिक्षण।

कार्य, जीवा, वर्गों और समाज आदि की संबंधित गति है और मनोविज्ञान की व्याख्याएँ इसे व्यापक रूप से वर्णन करती हैं। इसके अलावा व्यापक मनोविज्ञान विद्याएँ जीवों की व्यवहारी के अध्ययन से संबंधित हैं। मनोविज्ञानवादी विद्याएँ जीव समूहों की व्यवहारी के अध्ययन से संबंधित हैं। मनोविज्ञानवादी विद्याएँ जीव समाज के साथ-साथ साधित पर भी लाभ देती हैं।

मनोविज्ञानवादी आलोचना के मनोविज्ञानिक आलोचकों द्वारा लाभ जाता है। यह आलोचना के अन्तर्गत लक्षण आँख पाठ्यक्रम के अन्तर्गत पढ़ने वाले प्रभावों का अध्ययन देता है। शारीर से अभग या और मनात्मक व्यापारों का अध्ययन समेत ही नहीं है। कार्य के वितर से प्रभावित होने वाले विज्ञानवादी आलोचना जी निर्दि पर्याप्त के साथ-साथ १०८ लक्ष आँख द्वारा देखने-याकृ दृष्टि से भी आठ दृष्टियां

मनोविज्ञानवादी आलोचना की गुरुत व्याख्या:

अभग

के मन मानिक के साथ साथ साहित्य आँख लजीकों का व्यापक रूप से प्रभावित होने वाली विज्ञानवादी आलोचना की गुरुत व्याख्या अनुलिखित है—

मनोविज्ञानवादी के प्रतिपाद्य कार्यक्रम के अभगुलि को, १०८ लक्ष द्वारा देखने की शुरू की गई है जो विभिन्न विभिन्न

या समर्पण ने अकांशा को जीवन की प्रेरणा राखी ही
१९५ में भागा।

मनोविज्ञानवादी मानव-भव के विशेषज्ञता की पृष्ठीते पर
आधारित है। यह मानव के अंतर्जीवन के विश्लेषित जगते
जा मध्याम जीती है।

फिर भी १९५० के व्यवाजार के व्यापारी का मक्कोंगा होती है और
व्यापारी की पृष्ठीन अपेक्षा यह अन्यतर मन से होता है।
मनोविज्ञानवादी सोशल के अंतर्जीवन १९५० की व्याव्याप्ति व्यापार
के व्यापारी के आद्यमन से लिया गया है।

मनोविज्ञानवादी आलोचना में इडल, धर्म और प्राचीन मूल्य
आवानों का विषेष निया गया है।

जिसी रूपों के विभिन्न के लिए व्यवाजार की जा भव-सिद्धि
होती है और १९५० के व्यवाजार की मनःस्थिति को लिये १९५०
में प्रभावित होती है? १९५० व्यवाजार की इस पृष्ठीत जो उद्दीर्ण है
इसके माध्यम से जन और व्यापक की भावात्मक संरचना
की व्याव्याप्ति जी होती है जो व्यापार के पात्रों, परिस्थितियों
एवं विषयजगत् और १९५० का विशेषज्ञता की मनोविज्ञान के
सिद्धांतों के अन्तर्जीवन १९५० के लिया जाता है।

मनोविज्ञान व्यापक १९५० से मूल्य के व्यवहार का अद्यमन
होता है। इसकी मान्यता है कि मूल्य के नन्द और
व्यापार में विस्तृत लिपा-प्रातिलिपा व्यवस्था होती है।

मनोविज्ञानवादी आर्थिक जगत् ३१८० संबंध अर्ज नालालिं विषयवाद के रूपीकरण होता है, इसका आधार प्राप्ति हुए के स्वीकृति के मार्ग ने प्राप्ति होता है।

मनोविज्ञानवादी के अनुसार मानव-जीवन के असली इच्छा और संवेदी उसके भावना जगत् में घटित होती है। आपका जीवनालय या की धरार अपनी दृष्टिकोण द्वारा बाल्यकालीन जीवनाशों से प्रभावित और प्रेरित होता है।

मनोविज्ञानवादी समीक्षकों की मान्यता है कि धन्युल जी जाग्ना और जीवित रहने की इच्छा के सिवाएँ भी धन्युल जी गठनतम प्रवृत्तियों की व्याख्या होती है। इसलिए इनका व्यापक प्रयोग साहित्यिक समीक्षा एवं कला जीवन पाठ्यक्रम में सम्भव हो सकता है।

मनोविज्ञानवादी अनीदा के अनुसार जीवन्युल जी धन्युल संबंधी विहिन्नता एवं वही अंतर्विहिन्नता से है अतः पतीन, विव और शिव के अंतर्विहिन्नता एवं वही अंतर्विहिन्नता जीवन्युल जी धन्युल जी जीवन्युल संबंधी सक्षम हो सकता है।

मनोविज्ञानवादी आर्थिक जगत् इच्छा जी धन्युल जी प्रति जी धन्युल विज्ञान जीवन्युल है इसलिए इसके व्यापारिक होने की आधा जी धन्युल विज्ञानवादी अर्ज अनुरूप है।

वर्तमान धन्युल जी मनोविज्ञानवादी अनीदा में अन्यायिका महत्व प्रिया ग्राम जीवन्युल अर्जी मान्यता है कि इसी जी ग्राम एवं व्यापक जीवन्युल अर्जी धन्युल जी प्रति सद्विहिन्नता एवं धन्युल जी जीवन्युल से प्रति जीवन्युल है।

तुम लिखाकर जह जाते हो कि मनोविज्ञानी आलोचना
शीसकी में असौ ज्ञान अभिन्न महत्वके सिद्धांत हों, विस्तर साहित्य
और ग्रन्थ जैसी दृष्टिया पर भी व्यापक प्रभाव डाला। इससे व्याप्ति विद्या
जैसे सरलेंद्र विद्यार्थी जैसे विद्या वर्षी विद्या के निमित्त ज्ञा व्यु
प्रवाहत हुआ।

साहित्य मनोविज्ञानी ने सिद्धांत एवं प्रशापित हुआ परंतु
मनोविज्ञानी आलोचना मात्रांतरे १९५३ में व्यापित नहीं हो जानी
जाकि मनोविज्ञानी आलोचना जैसे असौ सीधा बहु हो है। कि
यह ज्ञानान्वयितों को विश्लेषित जरूर जैसी धर्मिय-प्रकृत्या तो
देती है लेकिन मुख्य हास्ति नहीं देती।

⑧ यथार्थवाद के स्पष्ट लक्ष्य हुए अनी प्रमुख प्रवृत्तियों का नया लिज़ |

— यह पर्वत आदर्शवाद का क्रियार्थी है और भास्तिगांधी पर आधारित है। यथार्थवाद भव एविकार लक्ष्य है कि प्रवृत्ति वस्तु, प्रवृत्ति, प्रवृत्ति तथा प्रवृत्ति विषय का आस्तीव दृष्टि है।

यह एक द्वारे ज्ञान अथवा विचार में ही भी नहीं हो। प्रयोगवाद वाद का इस अपरिभिर्भाव, व्यवहारवाद, कार्यगांधी, अनुश्रवगांधी, प्रयोगवाद आदि नामों से भी उल्लिखित है प्रयोगवादी ज्ञानः। मानव जीवन के वास्तविक पक्ष पर ज्ञान अथवा विचार में ही नहीं हो। यह विचारव्याप्ति विद्यमाण के कड़कर द्वारा निर्जीव लक्ष्य है और यह मानती है इस वस्तु घटना की अपेक्षा माहियालिक नहीं है।

आदर्शवाद ईश्वर की आनेंद्रिय सभ्य और आत्मा ईश्वर का कुण्ड मानती है। मनुष्य जीवन का इस वस्तु जगत् की अपेक्षा आव्यालिक जन श्रेष्ठ है। आदर्शवाद ईश्वर की आनेंद्रिय सभ्य और आत्मा ईश्वर का कुण्ड मानती है।

मनुष्य जीवन का आनेंद्रिय उद्देश्य आत्मानुभूति है। यह पर्वत आदर्शवाद का क्रियार्थी है और भास्तिगांधी पर आधारित है। व्यप्रियवाद यह एविकार लक्ष्य है कि प्रवृत्ति वस्तु, प्रवृत्ति, प्रवृत्ति तथा

यह एक द्वारे ज्ञान अपरिभिर्भाव विचार में ही नहीं हो।

यह आपकुछ तरी है कि ज्ञान सम्बूद्ध लक्ष्य की प्रवृत्ति वस्तु, प्रवृत्ति अथवा प्रवृत्ति का ज्ञान हो ही। जीव वस्तुओं का हक्क ज्ञान नहीं होता, आस्तीव तो ज्ञान भी होता ही। यह विचारव्याप्ति वस्तु के आनेंद्रिय को ही अपरिभिर्भाव मानती है। यथार्थवादी वर्षों के अनुसार ज्ञानेभी को द्वारा प्राप्त ज्ञान की अपरिभिर्भाव है।

रात नो भौसी मुझे गदनी सुनाती थी। उस रोटा उसके पुरांगन की गदनी सुनाई। "एक बाल पुरांगन [मालिम बदा-आ] एक दिन उसकी माँ पर गई। पुरांगन घोलते हों उसका यह वापा।" पुरांगन की एक भौसी थी। उसके बड़ी ममता से उसे आमी पक्के तले सहरा दिया। उसे ध्यार दिया। पाजा-पोला।

"अमेरी भौसी से पूछा;" "भौसी उस पुरांगन की भौसी के अपने बच्चे नहीं थे आ?"

"नहीं लाला, वह मुझे भी बड़ी बहनशील।"

बालसुलभ मनोभाव जा चिकांगनः—

लोटी में लालसुलभ
मनोभाव जा चिकांगन लिया गया है। कोई दूषण क्षण
तुष्ट अपर्याप्त क्षामर में रहना और किर्द मास खाना, शंखुद दूध
थही तो ललक जा चिकांगन होता है।

"पिताजी, ज्ञा गाले में अजी तो पारी है?"

"पिताजी, एक धौठे पुल पर नदियाँ पाने जाएंगे न?"

"संग जी अजी हारे ही साप रहेगी?"

नारी जी ममता जा चिकांगनः—

आरतीप नारी जी ममता उसकी

सर्वोच्च विशेषता है। भौसी मातृत्व जा चुका प्राप्त जरूर के लिए
वह अपनी लंबी के बहु जो साप हो जाती है। उस पर आम
स्नेह और ममता उड़ेलती है। "तब भौसी अपना जान छोड़ना
मेरे साप खेलती थी.... भौसी के साप खेलने में ममा आता है।"

वह भुजे गोद में विठानर ज्ञा होमियार है मेरा रखा था ऐसा
कानून हमती थी। "लिन एक दिन जब रघु अपाना अपने पिताजी
के साथ घर वापस लौट आता है। तब मॉसी की अपिति अवधंत
भास्त्रिक हो उठती है। कानूनीय के मातृक्षय की कथक वेदना और
यंत्रणा जा साचक प्रिण फ्लूट लिया है।

मातृत्व भावना की प्राणाधारः—

ओडरे चुरंगन मेरे.... जदानी
में मातृत्व की भावना जो तो महत्व दिया ही जाया है। इसके साथ-साथ
मातृदीन व्ये के भौविकान जो भी उड़ी भिक्षत के साथ पितृत
लिया जाया है। व्ये के लिए भाँ सबकुछ दृष्टी है। पिता के साथ
वेसा लगाव, खुशाव या प्रेमभाव व्ये जा नहीं हो पाता है। जितना
कि भाँ के साथ दृष्टा है। मातृदीन व्ये के लिए सबसे कड़ी लदारा
है कि भाँ जी स्मृतियों में इष्ट रक्षा। भाँ के साथ पितृते गये
एक-एक पल की स्मृतियों त्रितमा ही उठती है। इस जदानी जा
रघु अपनी भाँ से बेद्द प्रेम लखा है। उसे भाँ जी जभी महसूस
होती है। भाँ जा स्पन लाई दूसरा नहीं ले पाता है। इसके दूलो—
झांग औं भाँ जी स्मृतियों भरी रहती है। "भाँ, भाँ धृती है आर
मॉसी, मॉसी ही रहती है। मॉसी आरी धृती है लिन भाँ सवालिल
आरी धृती है।" मातृदीन वालन के अंतर्भूत जी गदराई मे
ष्ठगर यह जदानी उसके दुःख-५९, ८८-यंत्रणा और वेदना—
व्यपार जो पितृत जाती है।

परिस्पृति व भनः। अपिति जा शुद्ध व भट्टिक प्रितानः—

ओडरे
चुरंगन मेरे.... जदानी में लिखिला है परिस्पृति व भनः। अपिति
जा शुद्ध व भट्टिक प्रिण लिया है।

माँ की भौत के दो दिन उपरे थे। उनकी आद में मुझे लर-लर
होने आ रहा था। पिता जी दिन-रात सिर पर धूप-रस्ते जैसे के
हठे होते। उन्होंने दूर गर तो मुझे माँ की आद और जी सतारी
थी। हर रात खाँ मुझे बाल में के गर सताती थी। रात जो अनेकों
दी चिठ्ठी वे पर लोट और मुझे लखड़ी आ गई। अंदरे में धूप-रस्ता
कर के ब्रेक थोड़ी इधर-उधर चलोत गर देखा, माँ नहीं थी।
लर-लर पिता जी तो मुझे आमी बाल में सुला ले, लर
आवा से पिता जी गो पुलारे के लिए भेजे मुझे रबोला। पर
मुझे उनके रोकी गी ऐ आपार्य चुमड़ी। उन्होंने भी भो जी आद
आती दीगी, घट सोप गर में दिपन-दिपक गर रोके लगा। गो....
जिसो आक्षोश गर के में धम्म से पिता जी के चिठ्ठी पर आ
धम्मा। उन्होंने मुझे अस के गाले ल्पाया।

सारतार के रस में लह लाजी है जि भीजा गानोडगर
ते लोगों की गधी गो नपी दिन फैल में भद्रत्वपूर्व शुभेशा
तिअड़ी ही ओड़े पुकार तिरे एक पर्जि प्रथार गधी है। इसमें
मातृदीन भला गी भीजोड़ा और व्यापा के आप-आप तिरसातां
प्रृती गी वीड़ लर-लर व्यापित हुई है। मुरगान गो पालने—
पोचने के लद उसका डै खाल और उसके प्रयोगोंमें प्रृती
मिठार गुमार देना भर्तिपर्वती है जिःसाम भातृदृष्ट गा जीवंत है
मिठार गो है। ओड़े पुकार भरे जानी गैरी होते हुई भी
नेवल गोलों भमाज तर लीजिए नहीं है। इस गैरी नी शरदेश
और डेला खलत भ्रयंत व्यापा ए विस्तृत है चंपूर्व आतीप
समाज में जिःसाम माता और मातृदीन भला जे भ्रतिनिष्ठि ए
एक आरतीप समाज में जिःसाम माता और मातृदीन भला
जे अतिनिष्ठि एक सासी और एक आरतीप है।

(७) निम्नलिखित पर ट्रिपली लाइन :

(अ) आति अथार्ववा॒द

(८) प्रतीक्षा॒द

(९) विवेचा॒द

(१०) एस के अंग

- अहिंसार्थवाद एवं गत और सांस्कृतिक आंदोलन है जो प्रथम विद्वन् छृष्ट के लिए शूरीप में विलक्षित हुआ विस्तृत ज्ञानादि का अध्ययन अपेक्षन मन को रुद्ध कर बढ़ाने की उम्मीद देता था; जिसकी परिणामस्वरूप अल्मोड़ अताक्षिणी था वृक्ष और हश्चों आर्य विचारों का अनेक दृष्टि था।
- प्रतीक्षा॒द संज्ञा पुर्व [सं० प्रतीक्षा॒+वा॑द] आधुनिक जाति का एक आंदोलन या सिद्धांत, जिसमें जात्यर्थना जा तुरन्त आधार प्रतीक्षा॒द जुनैवनिपूजन वैर आदि दृष्टि है। विश्व - प्रतीक्षा॒द जा आंदोलन १९९६ में शास्त्र में जीव जीव भरोडास के प्रतीक्षा॒द क्रियान्वयन वाधना - एवं जो प्राकाशित दृष्टि का साधन होता है।
- विवेचा॒द २०वीं सदी की आठवीं - अन्तर्रिक्षी जीविता का एक आंदोलन या जीवांश - किंवद्दन अपर्याप्त इमेजरी की परिमुक्तता तथा स्पृष्ट, लुभ गाध का व्यवहार माना जाता है। विवेचा॒द जो अन्तर्रिक्षी जीविता में धूर्व - राक्षेलीभूत आंदोलन के लिए विवेचा॒द जीव से पर्याप्त कीया गया, लै

गोस्वामी तुलसीदास के भाषण में प्राप्त होता है। कवितापर्याप्ति में गोस्वामी तुलसीदास को ज्ञान है कि जल सा करने हैं, राना विद्युत है और रानसमाज सारी जगती है। "जल जल, जलाल कृपाल है, रानसमाज बड़ी धूमी है।"

गोस्वामी तुलसीदास शहीत कवितापर्याप्ति में समकालीन सामाजिक अवस्था का एकार्थी प्रियता कुछ है। प्राण को परिकारित करनाने वाले रानसमाज को जान लाल लाल जल गोस्वामी जी के अपना धोभ प्राप्त होता है। कवितापर्याप्ति में समकालीन युग के भूति तुलसीदास जी का विशेष ना है। वे जलता नी व्यथा की आधित होने जहर है— "दरित दसानन दवाई देत दुली दीनवट्टु। दुरित दहन देसि तुलसी दाद करी॥"

कवितापर्याप्ति में समकालीन सामाजिक समाज के भूति तुलसीदास जी का दृष्टिकोण आलोचनात्मक है। समाज में व्याप्त अधिकारी, वरिष्ठता, गरीबी आदि से वे दुर्घटी है और इसीलिए वे एक वार-वार अपने आराध्य आशीर्वाद से इन दुर्घ-की नो दृश्य लाने की प्राप्ति जरूर है।

तुलसीदास की सामाजिक चेतना जो भूति छली सामाजिक जीवनप्रथा के रूप में दिखाई देती है। उनकी सामाजिक चेतना ने जी जल है, जो व्यक्तिगत संबंधों से युक्त लोगों परिवारिक हैं सामाजिक संबंधों तक और निश्च आपकी राज्य तक पहुंचती है। "पर हित सारिस धरने गहिं भाई। पर पाणि सभ नाहि अधिकारी॥" जो जीवन का सार मानने वाले गोस्वामी तुलसीदास का साहित्य लीगमंगल, समाज का और विज्ञान की भावना पर ही केव्वीत है। तुलसीदास जी की सामाजिक चेतना आपकी असीम, आदित्य समाज और जीवनका जी त्रुतियाद पर एक है।